Aethel Research Digest Juncture
An International Journal

Aethel Research Digest Juncture: An International Journal
E-ISSN: 3139-1672

Vol. 2, Issue 3, May- June 2026

साहित्य और समाज: उपेक्षित वर्ग एवं अभिव्यक्ति

अमर वर्मा
विद्यार्थी (परास्नातक), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत
Email: av933532@gmail.com

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.20249957

Dates
Summation:04/05/2026
Revised: 12/05/2026
Accepted: 24/05/2026
Published:30/06/2026

शोध सारांश

प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिलुप्त रहती है, वे सब उसके भाव उस समय के साहित्य की समालोचना से अच्छी तरह प्रगट हो सकते हैं। साहित्य न केवल मनुष्य के हृदय में नैतिक मूल्यों का सृजन, राष्ट्र के प्रति प्रेम भावना का प्रबल प्रवाह तथा मानव मन को उत्साह एवं उमंग से भरता है बल्कि साहित्य, समाज में हाशिए पर पहुँच चुके लोगों अथवा समाज में पीछे छूट चुके लोगों को भी हमारे समक्ष प्रस्तुत करने की क्षमता रखता है। रवींद्रनाथ टैगोर की निबंध 'काव्येर उपेक्षिता' तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी कृत निबंध 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' से प्रेरणा ग्रहण करते हुए मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत-भारती' नामक काव्य का सृजन किया।

इस रचना के माध्यम से हमारे साहित्य से विस्मृति हो चुकी स्त्री पात्र 'उर्मिला' को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इसके अलावा 'यशोधरा' नामक कृति के द्वारा मैथिलीशरण गुप्त ने गौतम बुद्ध की पत्नी को जो साहित्य से लगभग विस्मृत हो चुकी होती है, उनको हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि साहित्य समाज का वह दर्पण है जो समाज की कमियों को उजागर करते हुए समाज के उज्ज्वल भविष्य के लिए एक मार्गदर्शक का कार्य भी करता है।

बीज शब्द :- साहित्य, समाज, जन सामान्य, सामाजिक स्थिति।

Plagiarism Results
“We maintain a strict zero-tolerance policy towards plagiarism. The submitted manuscript has undergone a rigorous plagiarism check. The current report indicates a 05**%** match across 03 websites, ensuring the uniqueness and integrity of the research work."

"Licensing: This article is licensed under CC BY 4.0. It allows free use and distribution with proper attribution to the original author."

Citation: Amar Verma (2026), Literature and Society: Marginalized Classes and Expression, *Aethel Research Digest Juncture: An International Journal*, *2*(3), 32–38.

Aethel Research Digest Juncture:
An International Journal
E-ISSN: 3139-1672
Vol. 2, Issue 3, May- June 2026

१. परिचय:

प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिलुप्त रहती है, वे सब उसके भाव उस समय के साहित्य की समालोचना से अच्छी तरह प्रगट हो सकते हैं। साहित्य न केवल मनुष्य के हृदय में नैतिक मूल्यों का सृजन, राष्ट्र के प्रति प्रेम भावना का प्रबल प्रवाह तथा मानव मन को उत्साह एवं उमंग से भरता है बल्कि साहित्य, समाज में हाशिए पर पहुँच चुके लोगों अथवा समाज में पीछे छूट चुके लोगों को भी हमारे समक्ष प्रस्तुत करने की क्षमता रखता है। रवींद्रनाथ टैगोर की निबंध 'काव्येर उपेक्षिता' तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी कृत निबंध 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' से प्रेरणा ग्रहण करते हुए मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत-भारती' नामक काव्य का सृजन किया।

इस रचना के माध्यम से हमारे साहित्य से विस्मृति हो चुकी स्त्री पात्र 'उर्मिला' को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इसके अलावा 'यशोधरा' नामक कृति के द्वारा मैथिलीशरण गुप्त ने गौतम बुद्ध की पत्नी को जो साहित्य से लगभग विस्मृत हो चुकी होती है, उनको हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि साहित्य समाज का वह दर्पण है जो समाज की कमियों को उजागर करते हुए समाज के उज्ज्वल भविष्य के लिए एक मार्गदर्शक का कार्य भी करता है।

१.१. साहित्य

साहित्य और समाज को समझने से पहले सर्वप्रथम हमें यह समझना चाहिए कि साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति कैसे हुई है। हिंदी भाषा में 'साहित्य' शब्द जिस अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है, उसके लिए संस्कृत में 'वाङ्मय' एवं अंग्रेजी के 'Literature' शब्द व्यवहार में लाए जाते हैं।

साहित्य' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'धा' धातु में 'सम्' उपसर्ग और 'यत्' प्रत्यय लगने से हुई है। इस तरह, 'साहित्य' का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है 'सहित'। 'सहित' का भाववाचक रूप 'साहित्य' है। 'धा' धातु से बने 'हित' का अर्थ है - धारण करना। इस आधार पर कहा जा सकता है कि साथ रहने अथवा रखने का भाव से युक्त को 'साहित्य' कहा जाता है। डॉ. धीरेंद्र वर्मा द्वारा संपादित 'हिंदी साहित्य कोश' के अनुसार -'साहित्य सहित्+यत् प्रत्ययः साहित्य का अर्थ है शब्द और अर्थ का यथावत् सहभाव अर्थात् 'साथ होना'। इस प्रकार सार्थक शब्द मात्र का नाम साहित्य है।'[1]

२. शोध के उद्देश्य :-

- समाज और साहित्य के बीच के अटूट संबंधों का अध्ययन करना और यह देखना कि समाज साहित्य को विषय-वस्तु कैसे प्रदान करता है।
- हिंदी साहित्य के विभिन्न युगों में दलित, आदिवासी, स्त्री और श्रमिक वर्ग के चित्रण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझना।
- यह जाँचना कि उपेक्षित वर्गों ने अपनी पीड़ा, संघर्ष और पहचान के लिए किन भाषाई और कलात्मक माध्यमों का उपयोग किया है।

३. शोध कार्यविधि :-

इस शोध कार्य में मुख्य रूप से गुणात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गाय है:-

- वर्णात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति :- उपलब्ध साहित्यिक कृतियों का सामाजिक सिद्धांतों के आधार पर गहन विश्लेषण किया जाएगा।
- समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण :- चूँकि विषय 'समाज' से जुड़ा है, इसलिए साहित्य को सामाजिक स्थितियों के दर्पण के रूप में देखने की पद्धति अपनाई जाएगी।
- अंतःविषयक दृष्टिकोण :- साहित्य के साथ-साथ समाजशास्त्र और इतिहास के संदर्भों का भी यथास्थान उपयोग किया जाएगा ताकि निष्कर्ष अधिक सटीक हों।

४. मुख्य विश्लेषण एवं विवेचना

४.१. समाज का साहित्य निर्माण में योगदान

अब हमें यह देखना होगा कि समाज, साहित्य का निर्माण में क्या योगदान देता है? ध्यान दे तो हमें यह पता चलता है कि साहित्य जिन वैयक्तिक सुख-दुःख, आशा-निराशा, हास-परिहास, शोक-उल्लास, घृणा-प्रेम, राग-द्वेष, अनुराग-विराग आदि का निरूपण करता है, उनका उद्गमस्थल तो हमारा समाज ही है। सामाजिक जीवन की विविध स्थितियों एंव परिस्थितियों को चित्रित करना ही साहित्य का कार्य है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार - 'जब कि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।' [2] यहाँ आचार्य रामचंद्र शुक्ल के मत के द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि आम जन के मन की अवस्था का सीधा प्रभाव साहित्य पर पड़ता है क्योंकि एक लेखक जब कोई रचना करता है तो उसके ऊपर उसके परिवेश का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

साहित्य के निर्माण में समाज की भूमिका के महत्व पर प्रकाश डालते हुए आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'साहित्य की महत्ता' में लिखा है कि - "जिस जाति की सामाजिक अवस्था जैसी होती है, उसका साहित्य भी ठीक वैसा ही है।" [3] उपर्युक्त कथन पर ध्यान दे तो

हम यह समझ सकते हैं आज दलित साहित्य में हमें जो वेदना दिखाई पड़ती है वह उस समाज की अवस्था का ही चित्रण है।

४.२. समाज के निर्माण में साहित्य का योगदान

एक दूसरा प्रश्न उठना यहाँ अनिवार्य है कि जिस प्रकार साहित्य के निर्माण में समाज का महत्वपूर्ण योगदान है तो क्या समाज के निर्माण में साहित्य का भी कुछ योगदान है? इसका स्पष्ट उत्तर होगा कि 'समाज' और 'साहित्य' का सम्बन्ध अनादि काल से, साहित्य के उदय काल से चला आ रहा है। उदाहरण के रुप में देखें तो विष्णु शर्मा द्वारा लिखे गए पंचतंत्र की कहानियाँ हो या अन्य बाल साहित्यों से तमाम छोटी-छोटी नैतिक, व्यवहारिक चीज़े सीखने को मिलती हैं जो बाल मन में जिज्ञासाओं को जन्म देती है तथा आगे चलकर वही व्यवहारिक व नैतिक शिक्षा मनुष्य के जीवन में बहुत बड़ा प्रभाव डालती है।

४.३. साहित्य और समाज : उपेक्षित वर्ग एवं अभिव्यक्ति

प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है। जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिलुप्त रहती है, वे सब उसके भाव उस समय के साहित्य की समालोचना से अच्छी तरह प्रगट हो सकते हैं। मनुष्य का मन जब शोक-संकुल, क्रोध से उद्दीप्त, या किसी प्रकार की चिंता से दोचित्ता रहता है तब उसकी मुखच्छवि तमसाच्छन्न, उदासीन और मलिन रहती है; उस समय उसके कंठ से जो ध्वनि निकलती है, वह भी या तो फुटही ढोल समान बेसुरी, बेताल, बेलय या करुणापूर्ण, गद्गद तथा विकृत-स्वर-संयुक्त होती है। वही जब चित्त आनंद की लहरी से उद्वेलित हो नृत्य करता है और सुख की परंपरा में मग्न रहता है, उस समय मुख विकसित कमल-सा प्रफुल्लित, नेत्र मानो हँसता-सा, और अंग-अंग चुस्ती और चालाकी से फिरहरी की तरह फरका करते हैं; कंठध्वनि भी तब वसंत-मदमत्त कोकिला के कंठरव से भी अधिक मीठी और सोहावनी मन को भाती है।

मनुष्य के संबंध में इस अनुलंघनीय प्राकृतिक नियम का अनुसरण प्रत्येक देश का साहित्य भी करता है, जिसमें कभी को क्रोधपूर्ण अयंगरगर्जन, कभी को प्रेम का उच्छ्वास, कभी को शोक और परितापजनित हृदय-विदारी करुणानिस्वन, कभी को वीरता गर्व से बाहुबल के दर्प में भरा हुआ सिंहनाद, कभी को भक्ति के उन्मेष से चित्त की द्रवता का परिणाम अनुपात आदि अनेक प्रकार के प्राकृतिक भावों का उद्‌गार देखा जाता है। इसलिए साहित्य यदि जनसमूह (Nation) के चित्त का चित्रपट कहा जाए तो संगत है। किसी देश का इतिहास पढ़ने से केवल बाहरी हाल हम उस देश का जान सकते हैं पर साहित्य के अनुशीलन से कौम के सब समय-समय के आभ्यंतरिक भाव हमें परिस्फुट हो सकते हैं।[4]

साहित्य न केवल मनुष्य के हृदय में नैतिक मूल्यों का सृजन, राष्ट्र के प्रति प्रेम भावना का प्रबल प्रवाह तथा मानव मन को उत्साह एवं उमंग से भरता है बल्कि साहित्य, समाज में हाशिए पर पहुँच चुके लोगों अथवा समाज में पीछे छूट चुके लोगों को भी हमारे समक्ष प्रस्तुत करने की क्षमता रखता है। रवींद्रनाथ टैगोर की निबंध 'काव्येर उपेक्षिता' तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी कृत निबंध 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' से प्रेरणा ग्रहण करते हुए मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत-भारती' नामक काव्य का सृजन किया। इस रचना के माध्यम से हमारे साहित्य से विस्मृति हो चुकी स्त्री पात्र 'उर्मिला' को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इसके अलावा 'यशोधरा' नामक कृति के द्वारा मैथिलीशरण गुप्त ने गौतम बुद्ध की पत्नी को जो साहित्य से लगभग विस्मृत हो चुकी होती है, उनको हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इन दोनों रचनाओं के माध्यम से मैथिलीशरण गुप्त ने न केवल 'उर्मिला' और 'यशोधरा' जैसी महत्वपूर्ण स्त्री पात्रों को हमारे सामने प्रकट करते हैं बल्कि उनकी विरह वेदना को भी जन सामान्य के सामने प्रस्तुत किया है।

समय के साथ-साथ समाज की स्थिति बदलती रहती है जिसमें हर बार समाज के सामने एक नई चुनौती प्रस्तुत होती है पर साहित्य हर बार समाज की उस समस्या को; चाहे वह कितनी ही जटिल क्यों न हो जन समूह के समक्ष प्रस्तुत किया। मुंशी प्रेमचंद ने साहित्य के माध्यम से समाज में हाशिए पर पहुँच चुके तथा समाज के उपेक्षित वर्ग को हमारे समक्ष प्रस्तुत कर, सामाजिक विकृतियों को उजागर करते हुए उसे समाज के मुख्य धारा में जोड़ने का प्रयत्न किया है। उदाहरण के लिए यदि हम मुंशी प्रेमचंद की कफन कहानी को देखें तो हम पाते हैं कि घीसू और माधव जो समाज में निम्न वर्ग से आते हैं, उनकी भी अपनी अनेक परेशानियाँ है परन्तु मुंशी प्रेमचंद ने घीसू और माधव के आलसी एवं कामचोर होने के साथ समाज के उन परिस्थितियों को भी उजागर किया है जिसके कारण वे कामचोरी, मक्कारी, नशाखोरी आदि करने को मजबूर है।

यहीं पर यदि हम मुंशी प्रेमचंद की एक दूसरी कहानी 'सवा सर गेहूं' की बात करें तो हम यह पाते हैं कि इस कहानी में शंकर नाम का एक किसान जो अपने द्वार पर आए हुए एक ब्राह्मण को भोजन कराने के लिए, अपने गांव के एक ब्राह्मण से सवा सेर गेहूं उधार ले आता है, परंतु अंत में उसे सवा सेर गेहूं के बदले उसे अपनी जमीन पंडित जी के नाम करनी पड़ती है तथा साथ ही आजीवन वह उनके गेहूँ का कर्ज उतारने के लिए उनके खेतों में मजदूर के रूप में काम करता है और अंततः शंकर के मर-मिटने के बाद उसका बेटा उस सवा सेर गेहूं का ब्याज भरने के लिए पंडित जी के खेतों में मजदूर बनने के लिए मजबूर हो जाता है।

यहाँ पर मुंशी प्रेमचंद ने समाज के दो वर्गों का चित्रण किया है जहां पर एक वर्ग, दूसरे वर्ग का शोषण इतनी चालाकी और क्रूरता से करता है कि दूसरा वर्ग मर-मिटने के बाद भी उस शोषण से मुक्त नहीं हो पता है। मुंशी प्रेमचंद की कहानी 'सवा सेर गेहूं' में उपेक्षित कृषक वर्ग की दयनीय दशा को निम्न पंक्तियों के माध्यम से समझ सकते हैं –

"शंकर ने विप्रजी के यहां 120 वर्ष तक गुलामी करने के बाद इस दुस्सार संसार से प्रस्थान किया। 120 रु. अभी तक उसके सिर पर सवार थे। पंडितजी ने उस गरीब को ईश्वर के दरबार में कष्ट देना उचित न समझा, इतने अन्यायी, इतने निर्दयी न थे। उसके जवान बेटे की गर्दन पकड़ी। आज तक वह विप्रजी के यहां काम करता है। उसका उद्धार कब होगा, होगा भी या नहीं, ईश्वर ही जाने।

पाठक ! इस वृत्तांत को कपोलकल्पित न समझिए। यह सत्य घटना है। ऐसे शंकरों और ऐसे विप्रों से दुनिया खाली नहीं है।" [5]

यदि वर्तमान समय की बात करें तो पिछले कुछ दशकों में साहित्य में किन्नर और दलित साहित्य का तेजी से विकास हुआ है जो इस बात का भी सूचक है कि कोई समाज जो सदियों तक दासता की बेड़ियों में जकड़ा रहा, समाज का एक बड़ा वर्ग जो अपनी लैंगिक पहचान के लिए आवाज उठाता रहा, साहित्य के माध्यम से कम समय में एक वृहद जनसमूह के समक्ष अपनी वेदना, संघर्ष, जीवन शैली, वर्तमान में अपनी सामाजिक स्थिति आदि वर्णन कर अपने अधिकारों की मांग की जा सकती है। यदि आज हमें दलित अथवा आदिवासी समाज में व्याप्त तमाम कुरीतियों, अशिक्षा आदि के बारे में ज्ञात है तो इसमें साहित्य का बहुत बड़ा योगदान है। उदाहरण के लिए ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा जूठन के माध्यम से हमें यह पता चलता है कि किस प्रकार हमारे ही समाज के एक बड़े वर्ग को हमारे ही समाज ने न केवल अस्पृश्य घोषित किया बल्कि एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण किया जिसमें जूठन जैसे त्याज्य पदार्थ को भी खाने पर विवश किया। यहाँ 'जूठन' उपन्यास की कुछ पंक्तियों को देख सकते है –

"शादी-ब्याह के मौकों पर, जब मेहमान या बराती खाना खा रहे होते थे तो चूहड़े दरवाजों के बाहर बड़े-बड़े टोकरे लेकर बैठे रहते थे। बरात के खाना खा चुकने पर जूठी पत्तलें उन टोकरों में डाल दी जाती थीं, जिन्हें घर ले जाकर वे जूठन इकट्ठी कर लेते थे। पूरी के बचे-खुचे टुकड़े, एक-आध मिठाई का टुकड़ा या थोड़ी-बहुत सब्जी पत्तल पर पाकर बाछें खिल जाती थीं। जूठन चटखारे लेकर खाई जाती थी। जिस बरात की पत्तलों से जूठन कम उतरती थी, कहा जाता था कि भुक्खड़ (भूखे) लोग आ गए हैं बरात में जिन्हें कभी खाने को कुछ नहीं मिला। सारा चट

कर गए। अक्सर ऐसे मौकों पर बड़े-बूढ़े ऐसी बरातों का जिक्र बहुत ही रोमांचक लहजे में सुनाया करते थे कि उस बरात से इतनी जूठन आई थी कि महीनों तक खाते रहे थे।" [6]

५. उपसंहार

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि साहित्य ने न केवल समाज के उपेक्षित वर्ग को, उसकी परेशानियों को, उसकी वेदना को हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है बल्कि समाज का वह उपेक्षित वर्ग आज साहित्य को आधार बनाकर अपनी समस्याओं को जन समूह के समक्ष प्रस्तुत कर उससे अवगत कराया है बल्कि साहित्य को एक सशक्त माध्यम बनाकर अपने अधिकारों के लिए आवाज भी उठाया है। आज यदि हमें किन्नर और दलित समाज की समस्याओं, संघर्षों तथा उस समाज द्वारा अपने अधिकारों की मांग को लेकर किए गए आंदोलन, अपने समाज में सुधार को लेकर किए गए प्रयासों के बारे में ज्ञात है तो इसमें साहित्य का बहुत बड़ा योगदान है, जिसके माध्यम से समाज में हासिए पर पहुँच चुके वर्ग को समाज के मुख्य धारा से जोड़ने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. धीरेंद्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोश, भाग-1, पृ. 920
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ-25, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन
3. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, 'साहित्य की महत्ता' निबंध से।
4. बालकृष्ण भट्ट, 'साहित्य जन समूह के हृदय का विकास है' निबंध से
5. मुंशी प्रेमचंद, प्रेमचंद की 51 लोकप्रिय कहानीयां, दिव्यांश पब्लिकेशन, पृष्ठ संख्या – 15
6. ओमप्रकाश वाल्मीकि, जूठन प्रथम खंड, पृष्ठ- 19-20, राधाकृष्ण पेपरबैक्स